

ISSN : 2229-5550

नाट्यम् 81

अप्रैल-जून, 2017



नाट्यम्

रंगमंच एवं सौन्दर्यशास्त्र की त्रैमासिक शोध पत्रिका,

अंक : 81, अप्रैल-जून, 2017

UGC Approved Journal Sr. No. 41002

ISSN : 2229-5550

नाट्य परिषद् (पंजीकरण क्र. 100066)

संस्कृत विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

दूरभाष-फैक्स (कार्यालय) 07582-264366 पिन-470 003

Natyam : A Quarterly Journal of theatre and aesthetics
published by Natya Parisad. Deptt. of Sanskrit,
Doctor Harisingh Gour University, Sagar,
Madhya Pradesh-Pin-470 003. India.
Phone-Fax (off.) : 07582-264366

सदस्यता शुल्क :

प्रत्येक अंक - 25/- रु., वार्षिक - 100/- रु.

आजीवन (प्रति व्यक्ति) - 2000/- रु.

आजीवन (प्रति संस्था) - 5000/- रु.

यह शुल्क मनीआर्डर, चेक या नगद दिया जा सकता है
जो नाट्य परिषद् सागर के नाम देय होगा।

पत्रव्यवहार :

प्रो. आनन्दप्रकाश त्रिपाठी

अध्यक्ष, संस्कृत विभाग

डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.) 470003

e-mail : sanskritsagar1946@gmail.com

© सर्वाधिकार सुरक्षित

मुद्रण : अजय जैन, अमन प्रकाशन नमक मंडी,
कटरा, सागर (म.प्र.) मो. 9826434225

नाट्यम् में प्रकाशित नाटकों के अनुवादों/रूपान्तरों या किसी भी अन्य सामग्री की किसी भी रूप में प्रस्तुति
के लिए नाट्य परिषद् से अनुमति प्राप्त करना आवश्यक है।

प्रकाशित रचनाओं की रीति-नीति अथवा विचारों से नाट्य परिषद्, संपादक या संपादक मंडल की सहमति
अनिवार्य नहीं है।

सूचना - आजीवन ग्राहकों को डाक व्यय 250 रु. (दो सौ पचास रुपये मात्र) पर नाट्यम् के उपलब्ध पुराने
अंक भी निःशुल्क देय हैं।

संपादकीय

संस्कृत नाट्य-लेखन की एक सुदीर्घ और समृद्ध परम्परा रही है। महाकवि भास, कालिदास, शूद्रक, भवभूति, विशाखदत्त और हर्ष आदि नाटककारों के नाटकों को भारतीय मनीषा ने ही नहीं, बल्कि विश्व के नाटककारों ने भी स्वीकारा और अनुवाद एवं रंगमंच के माध्यम से अपनी नाट्यधर्मिता को व्यक्त भी किया। नाट्यशास्त्रीय दृष्टि के साथ ही नाटकों की कथा, विन्यास, भाषा, शिल्प, जीवनदर्शन, सौन्दर्य, रस, प्रकृति, जीवन, मिथकीय चेतना आदि अनेक भाव भूमियों पर नाट्य-कृतियों का मूल्यांकन कर संस्कृत नाट्य आलोचकों ने अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। हिन्दी में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, जयशंकर प्रसाद, मोहन राकेश से लेकर भीष्म साहनी आदि अनेक रचनाकारों ने संस्कृत नाट्य-परम्परा का अवगाहन कर नाटक रचे और आधुनिक हिन्दी रंग-मंच को नई दिशा दी। प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी ने संस्कृत के अनेक नाटकों का हिन्दी अनुवाद कर अभिनव रूप विधान प्रस्तुत किया। आधुनिक संस्कृत नाट्य लेखकों ने बीसवीं सदी और नयी सदी की विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय स्तर की समस्याओं, प्रसंगों, स्थितियों, चरित्रों आदि को समझा और अनेक नाट्यकृतियां रचीं। स्त्री-विमर्श, आधुनिकता की नई भूमियों का संस्पर्श कर संस्कृत नाट्य लेखकों ने अपनी वैचारिक प्रतिबद्धता भी स्पष्ट की तथा भारतीय संस्कृति, परम्परा की पुनर्व्याख्या का सार्थक प्रयास किया। यों कहें कि भारतीय नाट्य परम्परा में कुछ नया जोड़ा और नयी दृष्टि प्रदान की। संस्कृत के आधुनिक नाटककारों में रामजी उपाध्याय, अभिराजराजेन्द्र मिश्र आदि अग्रगण्य हैं।

प्रस्तुत अंक में हिन्दी के युवा कथाकार आशुतोष मिश्र ने अभिनव दृष्टि से 'उत्तररामचरितम्' का मूल्यांकन कर संस्कृत के नये लेखकों के लिए आलोचना की एक नई जमीन दी है। संस्कृत नाटकों में 'राम-कथा' की विभिन्नता को संजय

कुमार ने भी बहुत ही सहजता के साथ प्रस्तुत किया है। नौनिहाल गौतम के द्वारा 'विदग्धमाधवम्' नाटक की नायिका राधा के विविध स्वरूप का यथार्थ परिचय महत्वपूर्ण है। सौम्या कृष्ण के द्वारा 'नान्दी' का चलचित्रों पर प्रभाव दिखा कर संस्कृत नाट्य परम्परा की व्यापकता की ओर संकेत किया गया है। इसी प्रकार वत्सला, शाहीन जाफरी, कृष्णमोहन, रामहेतु गौतम, गोपाललाल मीणा आदि लेखकों के लेख से यह अंक महत्वपूर्ण बन गया है।

नाट्य परिषद् एवं 'नाट्यम्' पत्रिका के संस्थापक संपादक प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी की अमूल्य धरोहर 'नाट्यम्' को संस्कृत विभाग के नवागत अध्यापकों की रचनात्मक उर्जा से नयी आभा मिली है। संपादक मण्डल के सभी सदस्यों का संयुक्त प्रयास होगा कि 'नाट्यम्' शोध पत्रिका के गौरव को निरन्तर गतिशीलता मिले तथा आगामी अंकों में मूल्यवान सामग्री प्रकाशित होती रहे।

आशा है 'नाट्यम्' का यह अंक नाट्य साहित्य के अनुरागियों को परितोष देगा। विद्वानों के सुझाव और प्रतिक्रिया पाकर हम 'नाट्यम्' शोध पत्रिका को बेहतर बना पायेंगे। इस उम्मीद में आपकी सकारात्मक सोच का नाट्यम्-सम्पादक मण्डल स्वागत करेगा।

प्रो. आनन्दप्रकाश त्रिपाठी

अनुक्रम

1. नाट्य-शास्त्र के विकास में नाट्य दर्पणकार रामचन्द्र-गुणचन्द्र का योगदान संगीता मेहता	9
2. संस्कृत नाटकों में रामकथा सञ्जय कुमार	16
3. उत्तररामचरितम् : राम की सीता कथा आशुतोष	32
4. विदग्धमाधवम् की नायिका राधा का नाट्यशास्त्रीय पक्ष नौनिहाल गौतम	49
5. आतंकवाद को अभिव्यञ्जित करता कश्मीर क्रन्दन नाटक वत्सला	60
6. आधुनिक संस्कृत नाटक लीलाभोजराजम् का वैशिष्ट्य शाहीन जाफरी	71
7. मुरारी कृत अनर्घराघवम् नाटक में अद्भुत रस-विवेचन बाबूलाल मीना	76
8. संवादों में दुष्यन्त का औदात्य कृष्णमोहन पाण्डेय	83
9. प्रशान्तराघवम् नाटक के नायक राघव अलीविया रज़ा	90
10. संस्कृत नाटकों में प्रयुक्त नान्दी का आधुनिक स्वरूप सौम्या कृष्ण	95

3

उत्तररामचरितम् : राम की सीता कथा

आशुतोष

राम के इस जीवन को आधार बना कर भारतीय साहित्य में बहुत लिखा गया है, और उसमें से कुछ तो श्रेष्ठता का पर्याय ही हो गया है। राम कथा का आदि स्रोत वाल्मीकि रामायण है, किन्तु प्रत्येक युग के रचनाकार अपनी नई व्याख्या के साथ अपनी-अपनी राम कथा लेकर उपस्थित होते रहें हैं। किसी ने मूल कथा से कुछ छोड़ा, किसी ने उसमें कुछ जोड़ा तो किसी ने मूल पाठ की युगानुकूल व्याख्या प्रस्तुत किया। पर भवभूति एक ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने वाल्मीकि रामायण की कथा में बदलाव किया। भवभूति और 'उत्तररामचरितम्' भारतीय साहित्य के शुक्ल पक्ष हैं जिनकी रोशनी निरन्तर प्रखर होती जा रही है। सम्भव है कि इस बात का पक्का विश्वास भवभूति को भी था। वे अपनी काव्य-प्रतिभा के प्रति आश्वस्त थे। इसीलिए वे "मालती माधव" में ही यह घोषणा कर देते हैं कि -

ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैष यलः।
उपत्यते ममु तु कोऽपि समानधर्मा
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी।।

भवभूति वाणी के अनन्य साधक हैं। शब्द और अर्थ की साधना के सिलसिले में भवभूति को कालिदास के बाद महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। भवभूति की तीन रचनाएँ प्रसिद्ध हैं- 'मालती माधव', 'महावीर चरित' और 'उत्तररामचरितम्'। इन्हीं के माध्यम से भारतीय साहित्य में भवभूति की एक खास उपस्थिति है। काव्य-कला, नाट्य शिल्प और सफलता की दृष्टि से 'उत्तररामचरितम्' भवभूति की श्रेष्ठ रचना है। यह रचना में 'ट्रेजडी' के रास्ते सुखान्त तक की यात्रा है।

भवभूति जीवन राग के सहज वैभव के कवि हैं। उनकी रचना 'मालती माधव' दस अंकों का प्रकरण है जिसमें मालती और माधव के प्रेम और विवाह की काल्पनिक कथा है। 'महावीरचरित' नाटक के सात अंकों में राम के राज्याभिषेक तक की घटनाओं का वर्णन है। भवभूति के रचना-मानस और नाट्यकला का सर्वोत्तम रूप 'उत्तररामचरितम्' में ही प्रकट हुआ है। सात अंकों के इस नाटक में भवभूति ने अपने सृजनात्मक हस्तक्षेप से कथ्य और रूप दोनों में अभूतपूर्व सफलता हासिल की है। इसमें राम के उत्तर जीवन की कथा है। ऐसे में इस कृति से गुजरना भारतीय साहित्य के गौरवशाली इतिहास से साक्षात्कार करना है। इस 'उत्तर' विशेषण प्रिय समय में इस ग्रंथ का शीर्षक भी खासा रोमांचक है। जैसा कि कथा के साक्ष्य बताते हैं कि यह राम के राज्याभिषेक के बाद सीता निर्वासन और मिलन की कथा है। हम सब जानते हैं कि राम अपने जीवन के पूर्वार्द्ध में अपने 'रामत्व' के लिए संघर्ष करते हैं और उत्तरार्द्ध में उसी रामत्व को खोते रहते हैं। राम का यह उत्तर जीवन समाज और साहित्य में हमेशा आलोचना का विषय रहा है। एक ही जीवन में एक 'चिरागी व्यक्ति' को अर्जित करने और फिर उसी चिराग के नीचे से उपजे अंधेरे में घिरते चले जाने का नाम 'राम' है। राम के इस जीवन की कथा को 'उत्तररामचरितम्' के नाम से पेश करने के पीछे संभव है कि भवभूति के अन्दर संस्कृत नाट्य परंपरा से अलग हट कर कुछ नया करने का भाव रहा हो। वैसे 'उत्तर' शब्द के अन्य कई अर्थ लिए जा सकते हैं, जैसे - 1. यह राम के राज्याभिषेक के बाद (उत्तर) की कथा है।, 2. 'उत्कृष्ट' रामस्य चरितं यस्मिन् तत् - जिसमें राम के उत्कृष्ट चरित्र का वर्णन हो।, 3. 'संसारार्णवतो जना येने तदुत्तर रामचरितम्'-जिससे संसार रूपी सागर से पार उतरा जा सके वह 'उत्तर' चरित है।, 4. 'विष्णुसहस्रनाम' में विष्णु का एक नाम 'उत्तर' भी बताया गया है। अतः विष्णु के अवतार राम का चरित्रवर्णन 'उत्तररामचरितम्' है। इन सभी दृष्टियों से इस ग्रंथ के शीर्षक पर विचार किया जा सकता है। यह एक लाक्षणिक प्रयोग है। जो भी हो इतने लाक्षणिक शीर्षक के साथ भवभूति ने 'नाम कार्य नाटकस्य गर्भितार्थ-प्रकाशकम्' वाले नियम का खूब पालन किया है।

'उत्तररामचरितम्' में कथ्य के ही स्तर पर नहीं वरन् पारंपरिक नाट्य शिल्प में भी भवभूति ने कई नये प्रयोग किए हैं। नाटक के आरंभ में सूत्रधार पूरे कौशल के साथ भवभूति का परिचय देता है कि "कश्यपकुलजजागर, अखिल-

विद्या-सागर, जननी जातुकर्णी के पवित्र गर्भोत्पन्न, श्रीकण्ठ-पद-सम्पन्न जिनका नाम श्री भवभूति प्रसिद्ध है।¹ यहाँ पर भवभूति ने एक विलक्षण नाटकीय युक्ति का प्रयोग किया है। सूत्रधार मंच पर भवभूति का परिचय नाटक देख रहे दर्शकों को देता है और अगले ही पल वह अयोध्या के एक नागरिक की भूमिका में आ जाता है। ये अपने समय की विलक्षण नाट्य युक्ति है। देवेन्द्र राज अंकुर इस युक्ति पर मुग्ध होकर कहते हैं कि “मंच पर खड़े-खड़े दर्शकों की आँखों के सामने उन्हें सूचित करते हुए एक नई भूमिका में पदार्पण करना-इससे बढ़कर नाटकीयता और क्या हो सकती है? भवभूति इस युक्ति से नाटक के भीतर नाटक का अभ्यास दे रहे हैं, जो आगे चलकर स्वयं उनके नाटक में होने वाला है, जब एक नाट्य मंडली राम के दरबार में उन्हीं के जीवन पर आधारित नाटक का मंचन करती है।² इस युक्ति को आधुनिक नाटकों में लगभग सभी निर्देशकों ने आजमाया है। लेकिन 800 ई. में भवभूति ने ऐसा संभव कर दिया था, यह देखना खासा महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त भवभूति ने रामायण की मूलकथा में भी कई सारे नाटकीय प्रयोग भी किया है। रामायण की मूल कथा दुखान्त है पर भवभूति ने इसे सुखान्त कर दिया है। पहले अंक में ‘चित्र वीथी’ की योजना भवभूति की प्रखर सृजनात्मक समझ की उपज है। दूसरे अंक में गंगा के प्रवाह में लव-कुश का जन्म, तीसरे अंक में ‘छाया सीता’ की कल्पना भी भवभूति की मौलिकता है। इसमें सीता अदृश्य रहते हुए राम को देखती रहती हैं किन्तु राम उन्हें नहीं देख पाते। पूरा का पूरा चौथा अंक ही भवभूति की कल्पना है जिसमें वाल्मीकि आश्रम में जनक, कौशल्या संवाद, लव-कुश का दर्शन, आदि है। पाँचवें अंक में चंद्रकेतु और लव की बातचीत और राम के पौरुष की निन्दा है। छठवें अंक में चंद्रकेतु और लव का युद्ध और राम के आगमन का वर्णन है। सातवें अंक में ‘गर्भ नाटक’ की योजना है। जिसमें वाल्मीकि के द्वारा लिखे गए नाटक का दरबार में प्रस्तुति है। भवभूति राम कथा के आदि गायक वाल्मीकि के रामायण की रचना प्रक्रिया को भी मंच पर स्पष्ट कर देते हैं। इस तरह भवभूति ‘उत्तररामचरितम्’ की नाट्य शैली में महत्वपूर्ण परिवर्तन कर इस नाटक को संस्कृत नाट्य परम्परा की “उत्तर शैली” में बदल देते हैं।

पहले अंक में कथा का आरम्भ इस सूचना के साथ होता है कि लंका युद्ध के सभी सहायकों आदि को राज्यभिषेक के बाद राम ने उनके स्थान पर वापस भेज दिया है। साथ ही माताएँ कौशल्या आदि गुरु वसिष्ठ के साथ अपने दामाद

ऋष्यशृंग के आश्रम में होने वाले यज्ञ में शामिल होने चली गयी हैं। सीता गर्भवती हैं इसलिए ने अयोध्या में ही रह जाती हैं। ऋष्यशृंग के आश्रम से लौट कर आये कंचुकी अष्टावक्र राम को कौशल्या और वसिष्ठ का आदेश मिश्रित संदेश है सुनाते हैं। माताओं का कहना है कि राम गर्भवती सीता के हर इच्छा को पूर्ण करें और वसिष्ठ ने कहा है कि राम प्रजा की हर इच्छा का पूरी निष्ठा से पालन करें। इसी अंक में सूत्रधार और नट की बातचीत में भवभूति सीता निर्वासन का संकेत दे देते हैं। यह एक तरह से सीता निर्वासन की पूर्वपीठिका है-

सर्वथा व्यवहर्तव्यं, कुतो ह्यवचनीयता।

यथा स्त्रीणां तथा वाचां साम्बुल्ये दुर्जनो जनः।³

अर्थात् ‘हमेशा सर्वात्मना व्यवहार करते रहना चाहिए, दोषहीन होने की सम्भावना कैसे की जा सकती है। क्योंकि दुर्जन जैसे स्त्रियों के चरित्र के विषय में शंका करता है, वैसे ही निर्दोष जनों के विषय में भी दोष निकालने का प्रयत्न करता है।’ इस पर नट कहता है कि “परम पवित्र सीता देवी के विषय में भी लोक सापवाद है। इसका मूल कारण राक्षस के घर में निवास है। लोगों को सीता की अग्निशुद्धि में विश्वास ही नहीं है।” यहाँ भवभूति सीता निर्वासन का संकेत तो देते ही हैं साथ ही सीता के निन्दकों को दुर्जन कहकर अपना पक्ष स्पष्ट कर देते हैं। अपने गुरु का आशीर्वाद और आदेश प्राप्त कर राम कहते हैं कि “लौकिक सत्पुरुषों की वाणी अर्थ के पीछे चलती है, परन्तु आद्य ऋषियों की वाणी के पीछे-पीछे अर्थ स्वयं चलता है। उनकी वाणी कभी व्यर्थ नहीं होती।” यहाँ भवभूति शब्द की सत्ता का अपूर्व स्वरूप खड़ा कर देते हैं। वसिष्ठ अपने संदेश में कहते हैं कि ‘बाल एवासि नवं च राज्यम्’, तुम अब तक बालक ही हो और राज्य भी नवीन है, इसलिए सचेत रहने की आवश्यकता है। साथ ही वे बेहतर शासन का सूत्र बताते हैं कि ‘यत्परमं धनं वं’, लोकप्रियता प्राप्त करना शासन की सफलता के लिए आवश्यक है। अतः नये राज्य के नये राजा राम गुरु को आश्वस्त करते हैं कि “लोक की अराधना के लिए मुझे स्नेह, दया, दुःख, (यहाँ तक कि) जानकी को भी छोड़ते हुए कोई व्यथा नहीं होगी।”⁴

यह राजा राम का कथन है। जानकी को त्याग देने का संकल्प लेने वाले राम एक अन्य प्रसंग में कहते हैं कि “यह मेरे घर में लक्ष्मी है, आँखों के लिए अमृत की सलाई है, इसका यह स्पर्श शरीर में गाढ़े-गाढ़े चन्दन का लेप है और बाँहों की

यह लता शीतल मोतियों के हार के समान है। और क्या कहूँ, इसकी कौन सी वस्तु प्रिय नहीं है? परन्तु इसका विरह सर्वथा असह्य है।” यहाँ राम स्वयं ही अपनी सीमा और सामर्थ्य का मूल्यांकन करते हैं। वे राम हैं, इस धरा धाम की हर चीज को वे बर्दाश्त कर सकते हैं। पर सीता का विरह उनके लिए असह्य है। किन्तु उन्हें बार बार सीता के ही विरह को बर्दाश्त करना पड़ता है। राम का पूरा जीना बर्दाश्त और विरह की ही ट्रेजडी है। एक तरफ लोक अराधना के लिए सीता को भी त्याग देने का राजा राम का संकल्प है और दूसरी तरफ सीता के असाध्य प्रेमी राम का सीता विरह से सशक्त मन। यहाँ देखा जा सकता है कि राजा राम और पति राम के कथन में कितना द्वन्द्व है। इसी द्वन्द्व ने एक ऐसे जीवन का निर्माण किया है जिसमें सभी दुःख पाते हैं। राजा राम व्यवस्था बनाते हैं और राम उस व्यवस्था में पीड़ा पाते हैं। राजा राम का लक्ष्य जनता और प्रजा का सुख है। यही राम का ‘सार्वजनिक’ है। सीता, कौशल्या और स्वयं राम भी राम के ‘निजी’ में शामिल हैं। राजा राम ‘सार्वजनिक’ से बँधे हैं और उसी ‘बँधाव’ में राम का ‘निज’ छूट जाता है। यह ‘सार्वजनिक’ और ‘निजी’ का भी द्वन्द्व है। इस द्वन्द्व में सार्वजनिक मुखर है किन्तु अनुगूँज निज की गहरी है। निर्णय सार्वजनिक के हित में होते हैं प्रभावित निज होता है। यह भवभूति की अभिनव सृजनात्मकता है जिसमें राम जीते हैं ‘सार्वजनिक’ के लिए पर बचे रहते हैं ‘निज’ की थाती पर। यह एक ऐसा द्वन्द्व है जिसमें राजा राम ने अपने सारे निर्णय ‘राम’ के विरुद्ध लिए हैं, चाहे वह सीता का निर्वासन हो या शम्बूक वध। ‘उत्तररामचरितम्’ की सभी महत्वपूर्ण घटनाएँ राजा राम और राम के बीच में घटती हैं। प्रजा के सुख के लिए अपना सर्वस्व त्याग करने वाले आदर्श में राजा राम तो जीत जाते हैं पर राम हार जाते हैं। राम को हरा कर, राम को दुःख देकर राजा राम राजा के रूप में सिद्ध हो जाते हैं।

भवभूति की अभिनव नाट्य योजना चित्र वीथी की है। अर्जुन नाम के एक कलाकार ने राम के जीवन की घटनाओं को पेन्ट(चित्रित) किया है। उन्हीं चित्रों को देखते हुए राम के मनोभूमि का स्वाभाविक वर्णन भवभूति करते हैं साथ ही तनाव और अलगाव को जो आगे सीता के निर्वासन से होने वाला है, को और अधिक तीव्रता के साथ उपस्थित करने के लिए राम और सीता के प्रेम के उदात्त और गहनतम प्रसंगों की रचना करते हैं। लक्ष्मण चित्र वीथी के बारे में बताते हैं कि इसमें आर्या के अग्नि परीक्षा तक की घटना चित्रित है, तब राम उन्हें रोकते हुए कहते हैं कि -

“उत्पत्तिपरिपूतायाः, किमस्याः पावनान्तरैः?

तीर्थोदकं च वह्निश्च, नान्यतः शुद्धिमर्हतः”

अर्थात् जन्म से ही पवित्र सीता को शुद्धि के लिए दूसरे पदार्थों की क्या आवश्यकता है? तीर्थों के जल और अग्नि स्वतः शुद्ध होते हैं, इन्हें शुद्ध करने के लिए किसी दूसरे पदार्थ की जरूरत नहीं होती। जैसे राम को सीता के अग्नि परीक्षा के बारे में सुन कर अच्छा नहीं लगता। भवभूति का प्रेम दाम्पत्य का सर्वोत्तम उदाहरण है। राम अपने वनवास के समय को चित्र में देखते हुए उन घबराये दिनों में भी सुख की चरम स्थितियों को याद करते हैं। जब सीता और राम ने वन को अपने प्रेम और सुख से भर दिया था। वे वन में नहीं एक दूसरे के मन में रहा करते थे। उस मन में जहाँ न कोई ‘हिरण’ है और न कोई ‘हरण’ है। राम को सब याद है, जरा-जरा “जहाँ पास-पास कपोल से कपोल सटाकर तथा परस्पर एक दूसरे की भुजाओं के दृढ़ आलिंगन में बँधकर धीरे-धीरे इधर-उधर की बात करते हुए बिना पता चले हम दोनों की रात बीत जाया करती थी।” यह दाम्पत्य का श्रेष्ठ उदाहरण है। यह प्रिय के साहचर्य का सुख है। हम जिससे प्रेम करते हैं उसकी उपस्थिति मात्र से समस्त ताप शान्त हो जाते हैं। निराला अपनी एक कविता ‘उक्ति’ में कहते हैं कि “कुछ न हुआ, हो/मुझे विश्व का सुख, श्री, यदि केवल पास तुम रहो! मेरे नभ के बादल यदि न कटे/चन्द्र रह गया ढका/तिमिर-रात को तिरकर यदि न अटे/लेशगगन-भास का, रहेंगे अधर हैंसते, पथ पर तुम हाथ यदि गहो।”¹⁰ यह प्रिय के सानिध्य का अर्थवान सन्दर्भ है। ‘उनके आने से आती है चेहरे पर रौनक’ वाली स्थिति। या फिर बिहारी की ‘जा तन की झाँई परे श्याम हरित दुति होय’ वाली बात। भवभूति ऐसे ही प्रेम के उपासक हैं। चित्रदर्शन के इसी क्रम में सीता पुनः वन में विहार की इच्छा व्यक्त करती है। और इसी समय दुर्मुख नामक पात्र राम को लोक में फैली हुयी सीता सम्बन्धी लोकपवाद की सूचना देता है। इस तरह भवभूति सीता निर्वासन के कारण के रूप में दो बातें लाते हैं। पहला ‘चित्र दर्शन’ (जिसे देख कर सीता एक बार फिर से वन देखने की इच्छा करती हैं) और दूसरा सीता सम्बन्धी लोकापवाद।

राम सीता के बारे में प्रजा की बातें सुनकर विचलित हो जाते हैं। उनको अघात लगता है। उनका मन धिक्कार कर उठता है - ‘धिक्कार है! सीता के दूसरे के घर में निवास करने का जो दोष बड़े आश्चर्यजनक उपायों द्वारा दूर किया गया

था, आज दुर्भाग्यवश वही पागल कुत्ते के काटने के विष की भाँति चारों ओर फैल गया है।”¹¹ यह वही राम हैं जो थोड़ी देर पहले सीता की अग्नि परीक्षा को याद नहीं करना चाहते थे और अब लोकापवाद सुनकर उसी का सहारा ले रहे हैं। पर अब उनको कोई नहीं सुन रहा है। राजा राम प्रजा की हर इच्छा को प्रत्येक दशा में पूरा करने के अपने संकल्प को दोहराते हैं किन्तु प्रेमी राम, पति राम सीता के बारे में विचार कर विचलित हो जाते हैं। सीता को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि “तुमसे संसार पवित्र है, तुम अनाथ की तरह मर रही हो।”¹² राम भावावेग में सीता को विभिन्न सम्बोधनों से पुकारते हैं - ‘देवयजनसम्भवे’, ‘मुनिजनकनन्दिनि’, ‘स्वजन्मानुग्रहपवित्रितवसुन्धरे’, ‘राममयजीविते’, ‘महारण्यप्रवासप्रियसखि’ आदि। यह शोकाकुल राम के उद्गार हैं। किन्तु राम यहाँ अपने मन को स्थगित कर जन को महत्व देते हुए सीता को वन में छोड़ आने का आदेश देते हैं। इस आदेश में राम का आत्मव्यंग्य देखने लायक है। राम कहते हैं कि ‘एष नूतनो राजा रामः समाज्ञापयति’, अर्थात् यह ‘नया राजा’ राम आदेश देता है। भवभूति का ‘नूतनो राजा रामः’ प्रयोग बहुत ही व्यञ्जन प्रधान है। नया-नया पद प्राप्त करने वाला राजा राम कुछ भी कर सकता है - यहाँ तक की सीता का परित्याग भी। भवभूति यहाँ ‘नूतन’ शब्द का प्रयोग ‘राजा राम’ के लिए करते हैं। ‘राम की शक्तिपूजा’ में निराला राम के लिए ‘नवीन’ विशेषण लाते हैं-‘होगी जय, होगी जय, हे पुरुषोत्तम नवीन’। सीता निर्वासन का आदेश देने वाले राम सिर्फ राजा राम हैं ‘नूतनो राजा रामः’, किन्तु सीता की मुक्ति के लिए संघर्ष करने वाले राम ‘पुरुषोत्तम नवीन’ हैं। राम के इस नूतन राजत्व में सामंती पवित्रता है तो वहीं ‘पुरुषोत्तम नवीन’ में नितान्त मानवीय सन्दर्भ है। वैसे भी मनुष्यता ही तथाकथित ‘पवित्रताओं’ को नष्ट करने का कूबत रखती है। भवभूति के आठवीं शताब्दी के नूतन राजा राम बीसवीं शताब्दी में निराला के यहाँ पुरुषोत्तम नवीन में तब्दील हो जाते हैं। निराला का समय स्वाधीनता आन्दोलन का समय है, बेहतर राष्ट्र/राज्य के लिए निराला बेहतर मनुष्य की तलाश करते हैं। इसलिए निराला के राम की चरम उपलब्धि पुरुषोत्तम नवीन होने में है। राम की यह नवीनता नवजागरण की चेतना से उपजी है। वैसे भी जब पुरुष के भीतर का ‘नूतन’ सामंत (राजा) जागता है तब जन-मन की सिताएँ निर्वासित होती हैं और जब उसके अन्दर का ‘नवीन’ मनुष्य जागता है तब तमाम सिताओं को मुक्ति मिलती है।

भवभूति के राम का व्यक्तित्व राजा राम और पति राम में बँटा हुआ है। भवभूति ने इस व्यक्तित्व विभाजन को निभाया भी खूब है। राजा राम अपने इस कृत्य के लिए स्वयं को कोसते हैं- ‘हाय, दुःख है! मैं अत्यन्त घृणित कर्म करने वाला तथा निर्दय हो गया हूँ। जैसे कोई कसाई बचपन से पाली हुई, साथ रहने वाली घरेलू चिड़िया को मौत को सौंप देता है - मार देता है उसी प्रकार मैं भी बचपन से पाली हुई, विश्वस्त भाव से अभिन्न सहचारिणी इस प्राणप्रिया को (गंगा स्नान के) छल से मृत्यु को दे रहा हूँ।”¹³ सीता के निर्वासन का संकल्प राम का ‘राजत्व’ है तो वहीं सीता निर्वासन पर राम का आत्मधिकार राम का ‘रामत्व’ है। सीता सो रहीं हैं। राम उन्हें देख कर कहते हैं कि “हे भोली-भाली सीते! इतना निन्दित कर्म करने के कारण चाण्डाल बने हुए मुझको छोड़ो। तुमने चन्दन के धोखे में भयंकर विष वृक्ष का आश्रय ग्रहण किया है।”¹⁴ राम बेचैन हैं - “अब (मेरा) संसार बदल गया। आज राम के जीवन का प्रयोजन समाप्त हो गया। अब (मेरे लिए) यह जीव लोक भयानक और सुनसान जंगल के जैसा है। संसार निस्सार लग रहा है। शरीर चेतना हीन सा हो रहा है। मुझे कहीं शरण नहीं है। क्या करूँ? कहाँ जाऊँ? क्या उपाय है?”¹⁵ भवभूति राम की इस मनोदशा को बताने के लिए जो रूपक चुनते हैं वह सब प्रत्यक्षबोध के उदाहरण हैं। यह भवभूति के रचनाकार की चरम उपलब्धि है। प्रत्यक्षबोध के तमाम उदाहरण ऋग्वेद में मिलते हैं- “मरुत वायु के देवता हैं, परम शक्तिशाली हैं, अतः असुर हैं (1.64.2)। वे वायु के समान शब्द करते हैं, गति में श्येन पक्षी से स्पर्धा करते हैं (7.56.3)। वे अग्नि के समान प्रकाशवान हैं (6.66.2)।”¹⁶ प्रत्यक्षबोध इंद्रियों से होता है और इंद्रियों के द्वारा अनुभूत रचना ही प्रामाणिक होती है। इस सन्दर्भ में रामविलास शर्मा कहते हैं कि “भारतीय चिन्तन परम्परा में मनुष्य के ज्ञान और कर्म का आधार उसकी इंद्रियाँ हैं। इंद्रियों से ही उसे प्रत्यक्ष बोध होता है। इसी प्रत्यक्षबोध को आधार बना कर कवि अपने कल्पना लोक की सृष्टि करते हैं।”¹⁷ रामविलास शर्मा इसी प्रत्यक्षबोध को ऋग्वेद में पाकर उसे भारतीय नवजागरण की पहली मंजिल कहते हैं और यही प्रत्यक्षबोध भवभूति के वर्णन में है। जाहिर सी बात है कि भवभूति भी रामविलास जी के प्रिय रचनाकार हैं।

भवभूति के राम को सीता हीन जीवन की कल्पना भी असहनीय है। राजा राम प्रजा-पालन करते हुए राम के जीवन को उजाड़ देते हैं। शोक की इस मनः स्थिति में राम अपने सम्पूर्ण जीवन का मूल्यांकन करते हुए कहते हैं कि “दुःखों को

अनुभव करने के लिए ही राम का जन्म हुआ है।¹⁸ निराला के राम भी 'राम की शक्ति पूजा' में हताशा के अतिरेक में कहते हैं - 'धिक जीवन जो पाता ही आया विरोध, धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध।' ¹⁹ 'राम की शक्ति पूजा' के राम को सीता को नहीं पाने की हताशा है तो 'उत्तरामचरितम्' के राम को सीता को खोने का दर्द है। इन दोनों प्रसंगों में आश्रय राम हैं और आलम्बन सीता हैं। 'उत्तरामचरितम्' में राम अपने कृत्य के लिए खुद को कृतघ्न, क्रूर आदि कहते हुए सीता से क्षमा माँगते हैं। सोयी हुयी सीता के पैरों पर सिर रख कर रोते हुए कहते हैं कि - 'राम के सिर में तुम्हारे चरण कमलों का यह आखिरी स्पर्श है।' (अयं पश्चिमस्ते रामशिरसि पादपङ्कज स्पर्शः) भवभूति की इस रचना में कथा के तनाव का आलम यह है कि राम का राजत्व कभी उनके रामत्व को इतनी भी छुट्टी नहीं देता कि वे खुद कुछ देर अपने साथ रह सकें। राम के 'सार्वजनिक' का शोर उनके 'निज' के एकांत को हमेशा भंग करता रहता है। दुःख के इस चरम दशा में भी एक राज-कार्य आ धमकता है। कुछ ऋषि उसी समय लवण नामक राक्षस से उत्पीड़ित हो राम से सहयोग मागने आ जाते हैं। राम शत्रुघ्न को उस राक्षस का संहार करने के लिए भेजते हैं और पुनः लौटकर अपने शोक के नितान्त अंधेरे में दाखिल हो जाते हैं तथा पृथ्वी से प्रार्थना करते हैं 'हे वसुन्धरा! तुम अपनी इस परमप्रिय पुत्री का ध्यान रखना।' सीता के रक्षार्थ पृथ्वी से प्रार्थना करना भी काफी अर्थपूर्ण है। आखिर पुरुषसत्तात्मक समाज द्वारा लांछित स्त्री की आखिरी पनाहगाह पृथ्वी (स्त्री) ही हो सकती है। सीता के पैरों पर अपना सिर रखकर अपना अपराध स्वीकार करते राम 'आधुनिक' राम हैं। यहाँ प्रश्न यह है कि अपराध कौन स्वीकार करता है 'राजा' या 'पति'? इसका जवाब चाहे जो हो, युग चाहें जो हो, पर इतना तो तय है कि अपना अपराध स्वीकारे बिना किसी राम को फिर से उसकी सीता नहीं मिल सकती।

सीता के बिना राम का यह उत्तर जीवन एक-एक कर लांछित होते जाने की कथा है। राम माताओं, जनक, गुरु के द्वारा भी लांछित किये जाते हैं। सीता निर्वासन की खबर पाकर कौसल्या आदि माताएँ सीता विहीन अयोध्या में ऋष्यश्रृंग के आश्रम से लौटने से इंकार कर देती हैं। यही निर्णय गुरु वसिष्ठ का भी है। राम की इस व्यवस्था में सबसे ज्यादा दुःख तो कौशल्या का है। कौशल्या का सुख हमेशा रातनैतिक निर्णयों के भेंट चढ़ता रहा। पति खोया, अपन प्रिय पुत्र के चौदह वर्ष के

वनवास का दंश सहा। उसके राजा बनने के बाद बारह वर्ष तक फिर उससे दूर रही और अब सीता हीन अयोध्या में न लौटने का प्रण कर लेती है। सत्ता का यह कैसा चरित्र है जिसका दंश हमेशा स्त्री को ही झेलना पड़ता है। दूसरे यह कि इन सभी बातों के पीछे राजा राम है और दोषी बनते हैं राम। सीता निर्वासन का ताप इतना घनीभूत है कि ब्रह्मज्ञानी जनक का भी धैर्य जबाब दे जाता है। उनको लगता है कि अपमानित, प्रसव पीड़ा से छटपटाती हुयी, जंगली पशुओं से घिरी हुई उनकी बेटी सीता उन्हें पुकार रही होगी, तब वे राम की विवेकहीनता की निन्दा करते हुए राम और राम की प्रजा, दोनों का विनाश कर देने के लिए विफल हो जाते हैं। इस तरह राम पति, पुत्र, शिष्य सभी रूपों में हार चुके हैं, खत्म हो चुके हैं। अयोध्या में यदि कुछ बचा है तो सिर्फ राजा राम।

यही राजा राम यह जानकर कि पृथ्वी पर शम्बूक नामक शूद्र तपस्या कर रहा है जिसके कारण एक ब्राह्मण का लड़का मर गया है, उसको रोकने चल देते हैं। शूद्र का तपस्या करना धर्म-विरुद्ध है। ऐसे में राजा राम का कर्तव्य बनता है कि वह शूद्र तपस्वी को मारकर ब्राह्मण-पुत्र को जीवित करें। इस प्रसंग में भी राम के राजत्व से उनका रामत्व टकराता है। किन्तु राजा राम से कोई जीत नहीं सकता, फलतः रामत्व हार जाता है। शम्बूक को मारने के लिए राम तैयार नहीं है किन्तु राजा को तो धर्म की व्यवस्था निश्चित करनी ही होगी। इसलिए राम अपने दाहिने हाथ को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि "अरे दक्षिण हस्त! तू मरे हुए ब्राह्मण को जिलाने के लिए शूद्र मुनि पर तलवार का प्रहार कर। अरे तू तो आसन्नप्रसवा प्रियतमा सीता का परित्याग करने में कुशल राम का हाथ है; अतः तुझमे करुणा कहाँ से आयी? निर्दय व्यक्ति का अंग होने के कारण तू भी करुणाहीन होकर शूद्र तापस पर प्रहार कर।"²⁰ इस तरह शम्बूक पर प्रहार करके राम व्यग्य करते हैं - 'अपि जीवेत्स ब्राह्मण पुत्र?' (क्या वह ब्राह्मण पुत्र जी गया होगा?) यहाँ राजा राम के कृत्य से राम आत्मगलानि से भर उठते हैं। वे अपने दाहिने हाथ को 'रे' कहते हैं। 'रे' में एक प्रकार का धिक्कार का भाव है। शम्बूक को मारने के लिए 'दाहिने हाथ' को निर्देशित करने के पीछे भवभूति का विलक्षण रचना-मानस है। दाहिना हाथ सीता को निवारित करने जैसा जघन्य कार्य कर चुका है। इसलिए उसे इस तरह के कार्यों में कुशलता हासिल है। दूसरे यह कि शास्त्रों में वाम भाग पत्नी का माना जाता है। परन्तु राम ने तो निर्दोष पत्नी सीता का परित्याग कर दिया है, अतः जिसे त्याग चुके

हों उसे निर्देशित करने का अधिकार भी खो चुके हैं। इसलिए भी वे दाहिने हाथ को आदेश देते हैं। यह वही तथाकथित नैतिकता है जिसमें शम्बूक मारा जाता है। शम्बूक को मारने में राम का संशय भवभूति का संशय है और भवभूति का संशय उनके समय का संशय है। वाल्मीकि रामायण में शम्बूक को मारने में न राम हिचकते हैं और न उसके वर्णन में वाल्मीकि। जबकि तुलसी अपने 'रामचरितमानस' से इस प्रसंग को निकाल देते हैं। यह समय का ही दबाव है जो रचना और रचना-मानस दोनों को प्रभावित कर देता है। वाल्मीकि के राम को शम्बूक को मारने में कोई संशय नहीं है। उनके लिए शम्बूक की हत्या एक धर्मोचित कर्म है। राज धर्म बहुत आसानी से किसी भी नागरिक की हत्या को बध में बदल देता है, वाल्मीकि के राम भी यही करते हैं। आधुनिक शब्दावली में कहें तो देश धर्म के नाम पर वह एक तरह से "फर्जी इनकाउन्टर" था। पर भवभूति के राम शम्बूक को इस मनोदशा के साथ मारते हैं कि वह बध नहीं हत्या लगने लगता है। कम से कम भवभूति शम्बूक के मृत्यु के प्रसंग पर दो विचार लाते तो हैं। एक राजा राम का और दूसरा राम का। वाल्मीकि के यहाँ इसकी भी गुंजाइश नहीं है। वहाँ विचार नहीं सिर्फ एक निर्णय है। तुलसी के राम इस प्रसंग में जाते ही नहीं। समय के बदलने के साथ सामाजिक चेतना में परिवर्तन आना तय है, और यही परिवर्तित चेतना किसी घटना को 'डिकोड' करने के औजारों को बदल देती है।

तीसरे अंक में भवभूति ने एक और नाटकीय युक्ति 'छायासीता' का प्रयोग किया है। इसमें सीता अदृश्य रहती हैं। इस प्रयोग के पीछे भवभूति की योजना कथा को आगे बढ़ाने और राम के विरह को चित्रित करने की ही है। शम्बूक को मारने के बाद राम उसी वन क्षेत्र में घूमते हैं जहाँ वे वनवास के समय सीता के साथ थे। सीता अभी तक अपने परित्याग से अनजान हैं। राम समझते हैं कि अब तक सीता की मृत्यु हो चुकी होगी। स्मृतियों की इस यात्रा में राम का दुःख प्रकट हो जाता है। ऐसे राम की मनःस्थिति को व्यक्त करने के लिए भवभूति 'पुटपाक' शब्द का प्रयोग करते हैं 'पुटपाक प्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः'। 'पुटपाक' शब्द बहुत ही अर्थवान है। यह वस्तुतः आयुर्वेद का पारिभाषिक पद है। आयुर्वेद में दवा बनाने के लिए औषधि को एक मिट्टी के पात्र में रखकर मिट्टी के दूसरे पात्र से ढक देते हैं। उस पर मिट्टी का लेप लगाकर आग में डाल देते हैं। पात्र के भीतर ही औषधि खदकती रहती है। इसी प्रक्रिया को 'पुटपाक' कहते हैं। सीता के बिना राम का मन

भी भीतर-भीतर खदक रहा है। ऐसे व्यथित राम सीता की स्मृति से बेहोश हो जाते हैं जिन्हे अदृश्य सीता अपने स्पर्श से चेतना में ला देती हैं। यह स्मृति से स्पर्श के बीच की आवाजाही है। इस शब्द को इस तरह ला कर भवभूति राम को सीता की स्मृति-यात्रा के एक भटके हुए राही में बदल देते हैं।

सीता के भीतर अपने प्रिय से अलग होने का दुःख इतना ज्यादा है कि वे उससे कभी मुक्त नहीं हो पाती। अदृश्य सीता बारह वर्ष के बाद जब अपने पुत्र लव को देखती हैं तो सुख के उन चरम क्षणों में भी वियोग की छाया से बाहर नहीं निकल पाती। पुत्र को देखकर वो कहती हैं कि "अब यह दीर्घायु अपनी इस प्रियदर्शना पत्नी से वियुक्त न हो।" यह सीता का राम मय मन है। यहाँ वे राम के बारे में सोचते-सोचते राम की ओर से सोचने लगती हैं। राम सीता को याद कर वन में घूमते हुए रोते हैं। अयोध्या राजधानी है। अयोध्या में राम रो भी नहीं सकते। राजधानियों में रोने की जगह नहीं होती सिर्फ रूलाने के कारण होते हैं।

भवभूति 'उत्तररामचरितम्' के आखिरी अंक में अभिनव नाट्य संकल्पना प्रस्तुत करते हैं। इस अंक की योजना सीता और राम का मिलन करा कर नाटक को सुखान्त में बदलने की दृष्टि से की गयी है। नाट्य कला की दृष्टि से इस सातवें अंक विशेष महत्व है। इसमें नाटक के भीतर नाटक होता है। राम के दरबार में वाल्मीकि द्वारा रचित राम-चरित्र का मंचन होता है। इसी के द्वारा राम निर्वासित सीता की मनःस्थिति जान पाते हैं। राम सीता के प्रति किए गए अपराध के लिए क्षमा माँगते हैं। अपना ही चरित्र देखते हुए राम विह्वल होकर नाटक के बीच-बीच में स्वयं बोलने लगते हैं। इस पर लक्ष्मण उनको धैर्य धारण करने को कहते हैं।

'उत्तररामचरितम्' में राजा राम और पति राम दो हैं। जिनका आपस में कोई सामंजस्य नहीं है। इनके द्वन्द्व और तनाव में ही राम का उत्तर जीवन दर्श पाता है। रामविलास शर्मा कहते हैं कि "व्यवस्था की रक्षा के लिए राजा राम ने जहाँ सीता का परित्याग किया, वहाँ उन्होंने एक काम और किया: शूद्र तपस्वी शम्बूक का बध। शूद्र और नारी, व्यवस्था के अनुसार, दोनों अधिकार वंचित हैं। सम्पत्ति का अधिकार पुरुष का है, नारी का नहीं। प्रवाद मात्र से भीत होकर पति स्त्री को त्याग सकता है, दो या अधिक रानियाँ रखने पर भी स्त्री पति को नहीं त्याग सकती। ब्रह्मज्ञान पर अधिकार द्विजों का है। राजा राम जिस व्यवस्था की रक्षा करते हैं, उससे सीता, राजा जनक, माता कौशल्या, स्वयं राम, सभी कष्ट पाते हैं। सुख पाते

है सम्भवतः वे नागरिक जिनके सन्तोष के लिए राम ने सीता को त्याग दिया, किन्तु नाटक में कहीं उनके दर्शन नहीं होते। केवल अन्त में अरुन्धती के कहने से, सीता पवित्र है, यह मानने को वे आ जाते हैं।²¹

इस नाटक में भवभूति ने कथा-युक्तियों से लेकर नाट्यकला तक में कई सारे अभिनव प्रयोग किए हैं। जो भवभूति को विशिष्ट नाटककार के रूप में स्थापित करता है। भवभूति के द्वारा संस्कृत के पारम्परिक नाट्य शैली में इस महत्वपूर्ण हस्तक्षेप को युगांतकारी मानते हुए रामविलास शर्मा की टिप्पणी है कि “भारतीय साहित्य में भवभूति का आविर्भाव विश्व साहित्य में नये युग का सुत्रपात है। यूनानी नाटककारों की देव सापेक्ष न्याय व्यवस्था की जगह देव निरपेक्ष न्याय व्यवस्था का चित्रण शेक्सपियर से पहले भवभूति ने किया। निरुद्ध संवेग, चेतना की मोह-ग्रंथि, ब्रह्मानन्द से उल्टी तीव्र शोकानुभूति, चेतना की सीमान्त भूमि में संचरण, नाटक-रचना में भाव सघनता का उतार-चढ़ाव-ये सब शेक्सपियर से पहले भवभूति में है। उनके अन्तर्विह्वल हृदय वाले व्यक्ति की छाया उनके परवर्ती साहित्यकारों में देखी जा सकती है।”²² नाटक के तीसरे अंक में वासन्ती सीता वियोग से व्यथित राम से उलाहना के साथ सीता निर्वासन के सम्बन्ध में पूछती है कि ‘आपने ऐसा अनर्थ क्यों कर डाला?’ तो राम जवाब देते हैं कि ‘लोको न मृश्यतीति’। अर्थात् लोक सहन नहीं करता था, (इसलिए)। वासन्ती के कारण पूछने पर राम कहते हैं कि ‘जो कुछ है, वही जानता है’। तमसा टिप्पणी करती है कि ‘(लोक के प्रति) यह शिकायत बहुत देर से है। (यदि यह पहले से सोचा गया होता सीता के साथ इतना बुरा नहीं होता।)’ राम निरुत्तर हो जाते हैं। इसके बाद वासन्ती राम को दो टूक सुनाती है-“कठोर हृदय राम! आपको यश बहुत प्रिय है, परन्तु इससे अधिक कठोर अपयश और क्या होगा? (कि आपने निरपराध सीता का परित्याग कर दिया।) उस मृगनयनी का वन में क्या हुआ? नाथ बतलाइये। क्या सोच रहे हैं? या फिर यही बताइये कि अब इसके आगे क्या सोचते हैं?”²³ राम चुप हैं। उनसे कुछ कहते नहीं बनता है। सीता का सवाल हर राम को ऐसे ही चुप कर देता है। पर सीता के प्रति किए गये अपराध के लिए राम जिस लोक को दोषी ठहराते हैं वही लोक कालान्तर में राम को भी माफ नहीं करता। आज भी लोक में ‘बेटी न ब्याहब अजोधा में’ उक्ति प्रसिद्ध है। यह राम की वर्चस्वशाली सत्ता का ‘काउण्टर डिस्कोर्स’। समृद्धि चाहें सकेत सी हो, वर चाहें राम सा हो पर लोक

अपनी बेटियों को सीता की नियति में वापस नहीं डालना चाहता। भोजपुरी भाषा के श्रेष्ठ कवि चन्द्रशेखर मिश्र अपने ‘सीता’ महाकाव्य में राम के इसी रामत्व पर सवाल खड़ा करते हुए कहते हैं कि-

‘कइसे ई लोक उनके याद करी,
जहाँ रामहि लोक के लीक मिटवलें।
राजस धर्म निभवलें, दम्पति ना निभवलें।
ऊ वने गइलें त ई वने गइली,
ई वने गइली त ऊ वने ना गइलें।
राम ही रमता चूक गयी,
सीय की सियता एक धार खड़ी है।
वे बड़े बाप के बेटे बड़े नही,
वो बड़े बाप की बेटी बड़ी है।’

यह लोक की कसौटी है, इससे कोई नहीं बचता। राम भी नहीं। संभव है कि इसीलिए भवभूति ‘उत्तररामचरितम्’ में रामकथा का अन्त बदल देते हैं। इस नाटक के अन्त में भवभूति के राम अपने अपराध के लिए क्षमा माँग लेते हैं और राम का सीता से और सीता का राम से मिलन होता है। अपनी गलती स्वीकार करते हुए राम नियतिवाद के और से बाहर निकल यथार्थ के ठोस धरातल पर खड़े हैं। भवभूति यथार्थ चेतना के रचनाकार हैं। वे ‘उत्तररामचरितम्’ के बहाने एक ऐसा ग्रंथ रचते हैं जो पारम्परिक रचनाओं से अपने ‘ट्रिटमेंट’ को लेकर भिन्न है। अन्य ग्रंथों में नायक अपनी जीत के साथ नायिका को पाता है जबकि ‘उत्तररामचरितम्’ का नायक हार कर अपनी नायिका पाता है। यह एक ऐसी जमीन है जहाँ राम की रमता चूक जाती है पर सीय की सियता एक धार खड़ी रहती है। अपनी इसी अभिनव नाट्य सृष्टि और काव्य दृष्टि के साथ भवभूति का ‘उत्तररामचरितम्’ राम की ‘सीता कथा’ है।

सन्दर्भ :

1. ‘अस्ति खलु तत्रभवान्काश्यपः श्री कण्ठ पदलाञ्छनः पदवाक्य प्रमाणज्ञो भवभूतिर्नाम जतुकर्णीपुत्रः’। भवभूति, उत्तररामचरितम्, प्रियम्बदा टीका, पृष्ठ 13

2. देवेन्द्र राज अंकुर, उत्तररामचरितम्, संगना (पत्रिका) अप्रैल-जून- 2012, संगीत नाटक अकादेमी, नई दिल्ली, पृष्ठ 6
3. भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक - 05, पहला अंक,
4. 'देव्या अपि हि वैदेह्याः साऽपवादो यतो जनः।
रक्षोगृहस्थितिर्मूलमग्निशुद्धौ त्वनिश्चयः॥ भवभूति, उत्तररामचरितम् श्लोक - 6, अंक पहला।
5. 'लौकिकानां हि साधूनामर्थं वागनुवर्तते।
ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति॥ भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक 10, अंक पहला।
6. "स्नेहं, दयां च, सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।
आराधनाय लोकस्य मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा॥" भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक 12, अंक पहला।
7. "इयं गेहे लक्ष्मीरियममृतवर्तिनयनयो-
रसावस्थाः स्पर्शां वपुषि बहुलश्चन्दनरसः।
अयं बाहुः कण्ठे शिशिरमसृणो मौक्तिकसरः
किमस्या न प्रेयो? यदि परमसह्यस्तु विरहः॥"
भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक - 38, अंक पहला।
8. भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक 13, अंक पहला।
9. "किमपि किमपि मन्दं मन्दमासत्तियोगा -
दविरलितकपोलं जल्पतोरक्रमेण।
अशिशिलपरिरम्भव्यापृतैकैकदोष्णो -
रविदितगतयामा रात्रिरेव व्यरसीत्॥"
भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक-27, अंक पहला।
10. निराला रचनावली भाग - 1, संपा0. नंदकिशोर नवल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 351।
11. "हा हा धिक् ! परगृहवासदूषणं यद्,
वैदेह्याः प्रशमितमद्भुतैरुपायैः।
एतत्तत्पुनरपि दैवदुर्विपाका -
दालर्क विषमिव सर्वतः प्रसक्तम्॥"

- भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक - 40, पहला अंक।
12. "हा देवि देवयजनसंभवे ! हा स्वजन्मानुग्रहपवित्रितवसुन्धरे! हा मुनिजनकनन्दिनि! हा पावकवसिष्ठारून्धतीप्रशस्तशीलशालिनि! हा राममयजीविते! हा महारण्यवासप्रियसखि! हा ताताप्रिये। हा स्तोकवादिनि। कथमेवविधायास्तवायमीदृशः परिणामः?
त्वया जगन्ति पुण्यानि त्वय्यपुण्या जनोक्तयः।
नाथवन्तस्त्वया लोकास्त्वमनाथा विपत्स्यसे॥"
भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक-43, पहला अंक।
13. "हा कष्टम्! अतिवीभत्सकर्मा नृशंसोऽस्मि संवृतः।
शैशवात्प्रभृति पोषितां प्रियां, सौहृदादपृथगाश्रयामिमाम्।
छचना परिददामि मृत्यवे, शौनिकों गृहशकुन्तिकामिव॥"
भवभूति, उत्तररामचरितम् श्लोक - 45, पहला अंक।
14. "अपूर्वकर्मचण्डालमयि मुग्धे ! विमुञ्च माम्।
श्रितासि चन्दनभ्रान्त्या, दुर्विपाकं विषदुमम्॥"
भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक-46, पहला अंक।
15. "हन्त, हन्त, संप्रति विपर्यस्तो जीवलोकः। अद्यावसितं जीवितं प्रयोजनं रामस्य।
शून्यमधुना जीर्णारण्यं जगत्। असारः संसारः। काष्ठं प्रायं शरीरम्।
अशरणोऽस्मि। किं करोमि? का गतिः॥"
भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक-46, पहला अंक।
16. शर्मा रामविलास, भारतीय नवजागरण और युरोप, 1996, हिन्दी माध्यम क्रियान्वयन निदेशालय, दिल्ली वि0वि0, पृष्ठ 25
17. वही, पृष्ठ 25
18. "दुःखसंवेदनायैव, रामे चैतन्यमागतम्।
मर्मोपधातिभिः प्राणैर्वज्रकीलायितं हृदि॥"
भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक-47, पहला अंक।
19. त्रिपाठी सूर्यकान्त निराला, निराला रचनावली, भाग-एक, संपादक-नन्द किशोर नवल राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 337।
20. "रे हस्त ! दक्षिण ! मृतस्य शिशोर्द्विजस्य,
जीवातवे विसृज शुद्धमुनौ कृपाणम्।

- रामस्य बाहुरसि, निर्भरगखिन्न -
सीताविवासनपटो : करुणा कुतस्ते?"
भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक - 10, दूसरा अंक।
21. रामविलास शर्मा, परम्परा का मूल्यांकन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004,
पृ०- 33
22. वही, पृ० - 44.
23. "अयि कठोर! यशः किल ते प्रियं,
किमयशो ननु घोरमतः परम्?
किमभवद्विपिने हरिणीदृशः,
कथय नाथ! कथं बत मन्यसे?"
भवभूति, उत्तररामचरितम्, श्लोक - 27, तीसरा अंक।

4

विदग्धमाधवम् की नायिका राधा का नाट्यशास्त्रीय पक्ष नौनिहाल गौतम

विदग्धमाधवम् भक्त कवि श्री रूप गोस्वामी द्वारा विरचित महत्वपूर्ण नाटक है। इसकी नायिका राधा तथा नायक कृष्ण हैं। नायिका राधा का नाट्यशास्त्रीय पक्ष प्रदर्शित करना इस शोधपत्र में अभीष्ट है। नाट्यशास्त्रीय ग्रन्थों में नायिका तीन प्रकार की कही गयी है- स्वकीया, परकीया तथा साधारण स्त्री तद्यथा- 'स्वान्या साधारणस्त्रीति तद्गुणा नायिका त्रिधा'

इन नायिका भेदों पर विचार करने पर नायिका राधा की कोटि स्वकीया ही सिद्ध होती है। यद्यपि दृश्यकाव्य के ग्रन्थों में वह तथा अन्य गोपियाँ अभिमन्यु आदि गोपों की परिणीता स्त्रियाँ बताई गयी हैं। इससे उनके परकीया नायिका होने का सन्देह होता है, तथापि उनके परकीयात्व का निवारण हो जाने पर तथा राधा में स्वकीया नायिका के सभी गुण विद्यमान रहने से राधा स्वकीया नायिका की कोटि में ठहरती है।¹

स्वीया नायिका भी मुग्धा, मध्या और प्रगल्भा भेदों से तीन प्रकार की होती हैं। इनमें से राधा वयोमुग्धा, काममुग्धा, रतवामा तथा कोपमृदु होने के कारण मुग्धा स्वीकाया नायिका सिद्ध होती है।² क्योंकि मुग्धा नायिका अवस्था एवं कामभाव में नयी रहती है, रति से डरने वाली तथा नायक के प्रति क्रोध में मृदु होती है- 'मुग्धा नववयः कामा रतौ वामा मृदुः क्रुधि'

पुनः नायिकाएँ अवस्था भेद से आठ प्रकार की होती हैं-स्वाधीनपतिका, वासकसज्जा, विरहोल्कण्डिता, खण्डिता, कलहान्तरिता, विप्रलब्धा, प्रोषितप्रिया और अभिसारिका। तद्यथा- 'आसामष्टाववस्थाः स्युः स्वाधीनपतिकादिकाः'³